सच्चाई की तस्वीर

(जगत् के आईने में)

मौलाना मुहम्मद फ़ारूक़ ख़ाँ

'बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम'

(अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है।)

सच्चाई की तस्वीर

जगत् क्या है? जगत् में हमारा क्या स्थान है? जीवन में हमें क्या कार्य करना है? ये वे मौलिक प्रश्न हैं जिनमें हमारे जीवन का मूल्य पूर्णतः छिपा है। इन्हीं प्रश्नों के सही उत्तर से हमपर जीवन की वे सच्चाइयाँ व्यक्त होती हैं जिनको प्राप्त किए बिना मनुष्य का जीवन अपूर्ण रह जाता है।

'क़ुरआन' सत्य का व्याख्याकार है। उसे मानवता के सबसे अन्तिम मार्गदर्शक ने हमारे समक्ष इस हैसियत से पेश किया है कि वह ईश्वर का सन्देश है। इसे उसने अपने बन्दों के मार्गदर्शन के लिए भेजा है। जो लोग सत्य तक पहुँचने के उद्देश्य से जगत् का अध्ययन करना चाहते हैं, वे इस सम्बन्ध में क़ुरआन से पूरा मार्गदर्शन प्राप्त कर सकते हैं। क़ुरआन का दावा है कि वह जो कुछ लोगों से मनवाना चाहता है और जिस जीवन-मार्ग की ओर आमंत्रित करता है, उसके सत्य होने पर सम्पूर्ण जगत् साक्षी है। उसके विरुद्ध जगत् से कोई एक प्रमाण भी नहीं जुटाया जा सकता। अलबत्ता यह मनुष्य का अपना काम है कि जिस सत्य की सूचना क़ुरआन ने दी है वह उसका अध्ययन जगत् की खुली हुई किताब में करे। यदि जगत् से पूर्णतः उसकी पुष्टि होती हो तो फिर उसके इनकार का कोई कारण नहीं हो सकता। सत्य तक पहुँचने का यही सही तरीक़ा है। तहक़ीक़ (खोज) के इस सही तरीक़े को छोड़कर जो लोग केवल अपनी बुद्धि को पर्याप्त समझते हैं, उनके हिस्से में अनुमान और अटकलों के अतिरिक्त और कुछ नहीं आ सकता। इस तरह उन्हें शान्ति और परितोष की निधि प्राप्त नहीं हो सकती जिसके लिए वे जगत् को समझना चाहते हैं, और न वे पूरे विश्वास के साथ अपने लिए जीवन का कोई मार्ग निर्धारित कर सकते हैं। पूर्ण विश्वास और निश्चिन्तता के लिए आवश्यक है कि मनुष्य को जगत् में जिस सत्य का सुराग़ मिल रहा हो उसकी पुष्टि ऐसे व्यक्तियों के द्वारा भी होती हो जिन्होंने स्वयं को संसार के समक्ष इस हैसियत से पेश किया हो कि उन्हें सत्य का प्रत्यक्ष साक्षात्कार हुआ है और वे उस पद पर खड़े किए गए हैं कि मानवों को वे सत्य का वास्तविक ज्ञान दें।

जगत् एक स्वयं-सिद्ध तथ्य है। जगत् कोई भ्रम नहीं और न इसमें तत्त्वदर्शिता और बुद्धि के विरुद्ध किसी रचना या कार्य को प्रस्तुत किया जा सकता है। जगत् के कार्य-कलाप में जिसने भी विचार और चिंतन से काम लिया है, उसे यह स्वीकार करना पड़ा है कि जगत् किसी सर्वज्ञ तत्त्वदर्शी और सर्वशक्तिमान ईश्वर के ज्ञान और तत्त्वदर्शिता और सत्य की अभिव्यक्ति है और वह किसी महान योजना के अन्तर्गत अस्तित्व में आया है।

जगत् यदि किसी ज्ञान और तत्त्वदर्शिता के अन्तर्गत अस्तित्व में आया है तो निश्चय ही सत्य की खोज में वह हमारा मार्गदर्शन भी कर सकता है। शर्त यह है कि उसके जिस भाग से सत्य का जो सन्देश प्रसारित हो रहा हो उसे सुनने का पूरा होश हो। जगत् यदि कोई हिकमत भरा कार्य है तो उसकी कोई चीज़ ज्ञान और तत्त्वदर्शिता की परिधि से बाहर नहीं हो सकती।

क़ुरआन और जगत्

क़ुरआन की दृष्टि में जगत् सर्वज्ञ और सर्वशक्तिमान ईश्वर की संरचना है, जिससे मानवीय ज़रूरतें पूरी होती हैं और मानव पर जीवन के ऐसे रहस्य भी खोल सकती है जो भौतिकता से परे और अलौकिक हैं। क़ुरआन सत्य को जगत् के मूर्तमान दर्पण में प्रस्तुत करता है और इस प्रकार प्रस्तुत करता है कि उसका इनकार न केवल अपने चतुर्दिक का इनकार है बल्कि स्वयं अपने अस्तित्व का इनकार भी सिद्ध होता है।

यहाँ इस संबंध में क़ुरआन से कुछ उदाहरण क्रमशः प्रस्तुत किए जा रहे हैं, जिनसे हमारी बात की पुष्टि होती है—

क़ुरआन में है—

> "उसी ने, जो कुछ आकाशों और जो कुछ धरती में है, अपनी ओर से तुम्हारे कार्य में लगा रखा है। निस्संदेह इसमें सोच-विचार करनेवालों के लिए निशानियाँ हैं।" (45:13)

क़ुरआन की इस आयत में इस सत्य को प्रस्तुत किया गया है कि जगत् की समस्त वस्तुएँ तुम्हारे के लिए वशीभूत की गई हैं। वशीभूत किए जाने के परिक्रम में मनुष्य की मानसिक और वैचारिक मार्गदर्शन के लिए

बहुत-से प्रमाण निहित हैं। जगत् मानवों के लिए कार्यरत है। यह वह प्रथम सत्य है जिसका उद्घाटन जगत् के अध्ययन में सबसे पहले होता है। हमारी सारी जानकारियाँ इसी बात का प्रमाण जुटाती हैं कि संपूर्ण जगत् हमारे लिए अस्तित्व में लाया गया है। जगत् की हैसियत किसी आकस्मातिक घटना की नहीं है। दोष-रहित व्यवस्थाओं का दूसरा नाम जगत् है। जगत् में अगणित ऐसी व्यवस्थाएँ पाई जाती हैं जिनके बिना धरती में जीवन और जीवन की ख़ुशियों की कोई संभावना न थी। धरती का वर्तमान आकार, सूर्य और चन्द्रमा से उसकी दूरी, उसकी अपनी धुरी पर 23½ अंश झुका हुआ होना, उसमें आकर्षण शक्ति का पाया जाना, इत्यादि ऐसी व्यवस्थाएँ हैं जिनके बिना यहाँ जीने की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। इसके अतिरिक्त जगत् में ऐसी अगणित हिकमत कार्यरत हैं जिनके विषय में न तो हमें ज्ञान प्राप्त है और न उन्हें पूर्ण रूप से समझने की हममें क्षमता पाई जाती है। क्या इन समस्त बातों के होते हुए इस सत्य के स्वीकार करने में कि सारा जगत् हमारे काम में लगाया गया है, किसी संदेह का अवसर बाक़ी रहता है!

एक ओर हम और हमारी ज़रूरतों की एक लम्बी सूची है और दूसरी तरफ़ विस्तृत ज़गत्। जगत् हमारी अपेक्षाओं का सही और पूर्ण उत्तर है। मनुष्य को जगत् में केन्द्रीय स्थान प्राप्त है। उसी के लिए उसके चतुर्दिक सारा कार्य-कलाप चल रहा है। जगत् की समस्त वस्तुएँ मानव-जीवन की सामग्री हैं। यह एक ऐसा तथ्य है जिसके लिए बाहर से किसी प्रमाण के जुटाने की ज़रूरत नहीं है।

जगत् की सारी वस्तुएँ हमारे लिए कार्यरत हैं। इसपर यदि मनुष्य सोच-विचार से काम ले तो वह इस निष्कर्ष पर पहुँच सकता है, जो जीवन के मूल्यवान तथ्यों को प्रकाश में लाने के लिए पर्याप्त होगा।

जगत् में आवश्यकता-पूर्ति की व्यवस्था इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि जगत् किसी अंधी ताक़त के बल पर नहीं चल रहा है, बल्कि इसका कोई स्रष्टा और प्रबंधक है जो हमारी आवश्यकताओं और निहित

हितों को देखते हुए इसे चला रहा है। जगत् में दयालुता, वात्सल्य, ज्ञान, तत्त्वदर्शिता, संकल्प और इरादे की कार्यशीलता चहुँदिश दिखाई देती है, जो हमारे प्रतीति के लिए पर्याप्त है कि संपूर्ण जगत् किसी दयावन्त और करुणामय ईश्वर का चमत्कार है। आश्चर्यजनक रीति से आवश्यकताओं की आपूर्ति किसी कुशल और सामर्थ्यवान दाता के बिना संभव ही नहीं है।

मानव-अस्तित्व से लेकर दूर तक विस्तृत जगत् में धरती से आकाशों तक पूर्ण सामंजस्य, समरूपता और एकात्मता (Co-ordination) पाई जाती है। जो इस बात का प्रमाण है कि जगत् के चलाने में किसी एक सत्ता का इरादा काम कर रहा है। दो ईश्वरों के इरादे कभी एक नहीं हो सकते कि सिरे से उनके इरादों में कभी किसी के विषय में मतभेद ही न हो सके।

जगत् के इन मूर्तमान प्रमाणों के पश्चात् एकेश्वरवाद की धारणा कोई निर्जीव धारणा नहीं रहती, बल्कि वही हमारे लिए सबसे बढ़कर मूर्तमान सत्य बन जाता है। जगत् में आवश्यकताओं की आपूर्ति की जो व्यवस्था पाई जाती है, इससे हमें एक और बड़ी सच्चाई का ज्ञान होता है, जो विचार और चिंतन की दुनिया में क्रांति लाने के लिए पर्याप्त है। यह व्यवस्था इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि मनुष्य की समस्त प्राकृतिक इच्छाएँ निरर्थक नहीं हैं। इनका पैदा करनेवाला निश्चय ही इनकी तृप्ति का भी साधन जुटाएगा।

मानव प्रकृति की अपेक्षा

मानव-प्रकृति की यह सबसे बड़ी अपेक्षा है कि उसे अमर जीवन प्राप्त हो। वह एक ऐसी दुनिया में आबाद होना चाहता है जहाँ मौत का गुज़र न हो सके, वह एक ऐसे बसन्त का स्वप्न देखता है जो सदैव शेष रहे। सामान्य पशु-पक्षी भविष्य की कल्पना नहीं करते, किन्तु इसके विपरीत मनुष्य कल की कल्पना करता है और अपने को आज से

अधिक कल का प्राणी समझता है। भविष्य का विचार उसे सामान्य पशुओं के स्तर से ऊँचा उठाता है। अतीत और वर्तमान उसकी दृष्टि में अस्थिर पूँजी से अधिक हैसियत नहीं रखते। इनपर वह संतोष नहीं कर सकता। वह नहीं चाहता कि जीवन सदैव के लिए समाप्त हो जाए। वह अपने जीवन की एक सफल जीवन के रूप में पुनरावृत्ति चाहता है। मनुष्य 'आज' से अधिक, जो उसे प्राप्त है, 'कल' का इच्छुक है। मानव-प्रकृति की अपेक्षा ही इस बात का पर्याप्त प्रमाण है कि उसे 'आज' की तरह 'कल' भी दिया जाए। मनुष्य चाहता है कि जो कुछ उसे प्राप्त नहीं उसे प्राप्त हो जाए और जो कुछ उससे छिपा है, छिपा न रहे। मनुष्य की असाधारण कल्पना-शक्ति उसके असाधारण जीवन का जीवन्त प्रमाण है।

मानव-जीवन में मनुष्य की भावनाओं का अत्यंत ध्यान रखा गया है, बल्कि उसका सम्पूर्ण जीवन उसकी भावनाओं और उसके एहसासों के आदर करने का ही दूसरा नाम है। फिर भी यदि वह पारलौकिक जीवन और ईश्वर के अनुग्रहों का इनकार करता है तो यह उसकी अपने ईश्वर के साथ निकृष्ट प्रकार की अनैतिकता है। यह उस क़ानून का इनकार है जो स्वयं उसके वर्तमान जीवन का क़ानून है। मनुष्य किसी के साथ केवल तीन-चार घंटे रहकर उसके शील-स्वभाव और अभिरुचि के बारे में जान लेता है। किन्तु ईश्वर के साथ कुछ घंटे का नहीं, जीवन भर का मामला रहता है फिर भी यदि मनुष्य ईश्वर को पहचान न सके तो इससे अधिक दुखद्-घटना क्या हो सकती है।

क़ुरआन में है—

> "आकाशों और धरती को उद्देश्य के साथ पैदा किया और तुम्हारा रूप बनाया, और बहुत अच्छा बनाया है, और उसी की ओर अंततः तुम्हें जाना है।" (64:3)

जगत् की रचना निरुद्देश्य नहीं है, संपूर्ण जगत् मानव के लिए है। मनुष्य जगत-वाटिका का सार है। उसके जीवन का निश्चय ही कोई

अर्थ होगा। ईश्वर ने यदि उसे रूप दिया है तो वह सुन्दरतम् रूप है। फिर यह कैसे संभव है कि उसे अस्तित्व तो प्रदान करे किन्तु उसका अस्तित्व अपनी मार्मिक और उद्देश्यगत रमणीयता और सुन्दरता से बिलकुल रिक्त हो। मृत्यु को जीवन-यात्रा की अन्तिम मंज़िल समझना वास्तव में इस बात का मानना है कि मानव-जीवन में वास्तविक उद्देश्य और अर्थपूर्णता का नितांत अभाव है। इस प्रकार की धारणा ईश्वर की समस्त कृति का निषेध कर देती है। यह विचार वास्तव में ईश्वर की उस व्यापक दयालुता और करुणा को स्पष्ट रूप से झुठलाना है, जिसकी अभिव्यक्ति से जगत् का कोई कोना भी खाली नहीं है। मानव-मार्ग को बेमंज़िल घोषित करना, ईश्वर पर एक बड़ा लांच्छन है और अक्षम्य अपराध है, यह एक ऐसी निराधार बात है जिसके लिए जगत् से एक प्रमाण भी प्रस्तुत नहीं किया जा सकता। मृत्यु मानव-जीवन का अन्त नहीं, वह केवल शाश्वत और अमर जीवन की भूमिका है।

क़ुरआन में है–

> "अतः सुनो, मैं कसम खाता हूँ सान्ध्य-लालिमा की, और रात्रि की और उसके समेट लेने की, और चन्द्रमा की जबकि वह पूर्ण हो जाता है, निश्चय ही तुम्हें मंजिल पर मंजिल चढ़ना है।" (84:16-19)

इन आयतों में इस सत्य को प्रमाणित किया गया है कि मानव-जीवन में एक महान परिवर्तन होनेवाला है। मनुष्य का वर्तमान जीवन एक ऐसे जीवन में परिवर्तित हो जाएगा जो इस जीवन से महानतम होगा।

प्रमाणीकरण की सहज रीति

क़ुरआन के प्रमाणीकरण का यह एक सामान्य नियम है कि वह जब किसी अमूर्त सत्य को प्रमाणित करना चाहता है तो वर्तमान जगत् से उसका कोई महसूस दृष्टांत प्रस्तुत करता है, और इस प्रकार प्रस्तुत करता है कि साथ ही उससे सत्य सिद्ध भी हो जाता है। क़ुरआन प्रमाणीकरण के कृत्रिम

तरीक़े का पाबंद नहीं है; वह नितांत प्राकृतिक सादगी और अकृत्रिमता के साथ मनुष्य में यह विश्वास और परितोष पैदा करता है जो उसे तर्क और दर्शन के कृत्रिम तरीक़ों से बेनियाज़ कर देता है।

विकास एवं परिवर्तन का क़ानून

जगत् में विकास का क़ानून पाया जाता है। प्रत्येक वस्तु के विकास की प्रकृति की ओर से पूर्ण व्यवस्था है। प्रत्येक वस्तु अपूर्ण की दशा से क्रमशः पूर्णता की ओर ले जाई जाती है। प्रत्येक वस्तु को विकास की मंज़िलें पार करने के लिए विभिन्न परिवर्तनों से गुज़रना पड़ता है। विकास के लिए यह परिवर्तन अपरिहार्य है। विकास के इस व्यापक क़ानून से इनसान अलग नहीं है, वह विकास के पड़ावों से गुज़रकर अपनी युवा को पहुँचता है। विकास का क़ानून उसके पूरे जीवन में क्रियाशील है। क़ुरआन सूचित करता है कि मनुष्य का जीवन एक अन्य जीवन में परिवर्तित होनेवाला है, जो वर्तमान जीवन का विकसित रूप होगा। जीवन का शरीर से विलगाव जीवन का अन्त नहीं है। मनुष्य की इस शरीर से अलग स्थायी रूप से एक हैसियत है।

स्थितियों में परिवर्तन कोई अद्भुत और असंभव बात नहीं है। परिवर्तनों का निरीक्षण जगत् में हम प्रतिदिन करते रहते हैं। संध्या के आगमन पर दिन विदा हो जाता है। रात्रि अपनी कालिमा का परदा सब पर डाल देती है। दिन का वातावरण बिलकुल बदल जाता है। इसी प्रकार एक दिन संपूर्ण संसार में एक परिवर्तन आएगा। मनुष्य उस दिन अपने एहसास और अनुभूतियों के अन्तिम चरण में पदार्पण कर रहा होगा।

मानव के वर्तमान जीवन में एक बड़ी रिक्तता पाई जाती है। मनुष्य आज विभिन्न प्रकार की व्यवस्था में घिरा हुआ है। वह जिस लोक में रहता है वहाँ भौतिक शक्ति को प्रधानता प्राप्त है। यहाँ नैतिकता की अपेक्षाएँ केवल उसी सीमा तक पूरी होती हैं जिस सीमा तक उन्हें भौतिक शक्तियों की अनुमति प्राप्त होती है। मनुष्य की

आवश्यकता एक ऐसे जीवन की है जिसमें भौतिकता नैतिकता के क़ानून की बिलकुल पाबंद हो।

हम देखते हैं कि चन्द्रमा क्रमशः बढ़कर एक दिन पूर्णिमा का चाँद बन जाता है। फिर यह कैसे संभव है कि चाँद, जो मात्र मनुष्य का एक सेवक है, अपनी पूर्णता को पा ले; किन्तु मनुष्य के लिए पूर्णता के प्राप्त करने का कोई मार्ग न हो। निश्चय ही मनुष्य एक ऐसा जीवन प्राप्त करने में सफल हो जाएगा जिसमें विवशताएँ उसका हाथ न पकड़ सकेंगी।

मनुष्य इस जगत् से कुछ लेकर नहीं जाता। वह केवल अपने नैतिक चरित्र का प्रदर्शन करके अपनी मंज़िल की ओर प्रस्थान कर जाता है। मनुष्य के नैतिक कर्तव्य क्या हैं? क़ुरआन इस प्रश्न का उत्तर है, जिसे ईश्वर ने इसी लिए अवतरित किया है कि मनुष्य उसके मार्गदर्शन में अपने जीवन को सत्य-मार्ग पर लगा सके।

क़ुरआन में है—

> "अतः सुनो! मैं क़सम खाता हूँ सितारों की स्थितियों की—
> और यह बहुत बड़ी क़सम (गवाही) है यदि तुम जानो—
> निश्चय ही यह प्रतिष्ठित क़ुरआन है...... इसका अवतरण
> संपूर्ण संसार के रब की ओर से है।" (56:75-80)

इन आयतों में प्रमाणित किया गया है कि क़ुरआन ईश्वरीय ग्रंथ है जिसे ईश्वर ने अपनी ओर से बंदों के मार्गदर्शन के लिए उतारा है। सितारों का एक मंज़िल से दूसरी मंज़िल में प्रवेश करना क़ुरआन के अवतरण का एक मूर्तमान दृष्टांत है। इस दृष्टांत में प्रमाणीकरण का पक्ष यह है कि जब सितारे जगत् और मानवों की आवश्यकताओं और निहित उद्देश्यों के अन्तर्गत अपनी विभिन्न मंजिलों में प्रवेश करते रहते हैं, जिनसे खगोल-शास्त्री बड़ी हद तक परिचित हैं, तो यदि ईश्वर की ओर से बन्दों के मार्गदर्शन के लिए कोई किताब अवतरित हुई है तो इसमें आश्चर्य की क्या बात है। आश्चर्य की यदि कोई बात हो सकती थी तो यह कि ईश्वर बन्दों को आजीविका से वंचित न रखता, किन्तु

किताब और मार्गदर्शन से वंचित कर देता। यह बात ईश्वर की अपार दया और ज्ञान के प्रतिकूल थी।

आकाश में अगणित सितारों के बावजूद इतनी रिक्तता पाई जाती है कि किसी भी अंतरिक्ष में यात्रा करने पर करोड़ों मील रिक्त स्थान मिलेगा। बल्कि मील का माप तो अंतरिक्ष की माप के लिए बहुत छोटा है। अंतरिक्ष में दूरी मापने के लिए प्रकाशवर्ष (Light Year), अर्थात् वह दूरी जिसे प्रकाश की एक किरण एक वर्ष में तय करती है, का प्रयोग करते है। प्रकाश एक सेकण्ड में एक लाख छियासी हज़ार (1,86,000) मील की दूरी तय करता है। इस हिसाब से एक दिन में 160 करोड़ मील और 365 दिन के एक वर्ष में लगभग 6 लाख करोड़ मील की दूरी तय होगी। सूर्य की एक किरण लगभग 8 मिनट में धरती तक पहुँचती है। चन्द्रमा का प्रकाश हम तक लगभग एक सेकण्ड में पहुँच जाता है। रात को जो सितारे हमें दिखाई देते हैं उनमें बहुत-से ऐसे सितारे भी हैं जिनसे हम तक प्रकाश के पहुँचने में एक दिन, एक मास नहीं बल्कि हजारों-करोड़ों वर्ष लग जाते हैं। कुछ सितारों का प्रकाश हम तक 9 लाख वर्ष में पहुँचता है। इस तरह का यदि कोई सितारा दुर्घटनाग्रस्त हो जाए और प्रकाश समाप्त हो जाए तो इसकी सूचना हमें हजारों वर्ष के पश्चात् मिल सकेगी। और यदि ऐसे सितारों पर किसी प्रकार के जीवधारी बस रहे हों और उनका देखना हमारे लिए सितारों से आनेवाले प्रकाश से संभव हो जाए तो हमें वहाँ ऐसे जीवधारी चलते-फिरते दिखाई देंगे जिन्हें मरे हुए हजारों वर्ष गुज़र चुके होंगे।

बिना दूरदर्शी-यंत्र की सहायता के आकाश में स्पष्ट रूप से दिखाई देनेवाले नक्षत्रों को गिनने के लिए यदि आधा घंटा लगता हो तो कैलीफ़ोर्निया के 100 इंचवाले माउंट विल्सन के दूरदर्शी-यंत्र से आकाश में इतने नक्षत्र दिखाई देंगे की उनकी गणना के लिए कुछ घंटे नहीं, दीर्घ काल चाहिए। कैलीफ़ोर्निया में माउंट पिलोमर पर दो सौ इंच का एक दूरदर्शी-यंत्र लगाया गया है। इस दूरदर्शी-यंत्र (Astronomical

Telescope) की शक्ति मानव-नेत्र से दस लाख गुना अधिक है। इसकी सहायता से एक ऐसी मोमबत्ती को भी आसानी से देखा जा सकता है जो धरती से 10 हजार मील की दूरी पर जल रही हो।

सादी आँख से लगभग सभी नक्षत्र पीले या श्वेत दिखाई देते हैं। किन्तु जब उन्हें माउंट विल्सनवाले 100 इंच के दूरदर्शीयंत्र या माउंट पीलोमर के 200 इंचवाले यंत्र से देखा जाए तो पता चलेगा कि नक्षत्रों में रंग इंद्रधनुष के रंगों की तरह विभिन्न हैं। कुछ सितारे नीले हैं, कुछ पीले, कुछ हरे और कुछ गुलाबी हैं। सारांश यह कि अंतरिक्ष, जो सूर्य-प्रकाश के वायु में बार-बार अपर्वतन (Refraction) से नीला दिखाई देता है, एक तना हुआ शामियाना मालूम देगा जिसमें हजारों छोटे-बड़े रंग-बिरंग के मोती जड़े हुए दिखाई देंगे।

नक्षत्रों के बिना आकाश का दृश्य कितना भयावह होता! सितारे विभिन्न मंज़िलों में प्रवेश करके अंतरिक्ष के विभिन्न भागों को सुसज्जित करते हैं। समय और ऋतु का लक्षण बनते है। भटके हुए यात्री उनके द्वारा अपनी दिशा_निश्चित करते हैं। आकाश में सितारों की निरंतर गति एक महान तथ्य है, जिससे हमारे और इस जगत् के हज़ारों निहित उद्देश्य जुड़े हुए हैं, जिनके विषय में पूरी जानकारी प्राप्त करने में भी हम असमर्थ हैं। यहाँ विचारणीय बात यह है कि जिस ईश्वर ने हमारी भौतिक और अपेक्षाकृत कम महत्व की चीज़ों की उपेक्षा नहीं की तो वह हमारी अर्थवत्ता सम्बन्धी और आध्यात्मिक मार्गदर्शन की अत्यंत महत्वपूर्ण आवश्यकता की कैसे उपेक्षा कर सकता है। इसलिए किताब का अवतरण कोई ऐसी बात नहीं है जिसका जगत् से कोई जोड़ न हो। बल्कि यह तो एक ऐसा तथ्य है जिसके साक्षी सितारे भी हैं, जो जगत् के निहित हितों के अन्तर्गत विभिन्न मंज़िलों में प्रवेश करते रहते हैं। क़ुरआन में है—

> "साक्षी है चढ़ता दिन और रात्रि जबकि उसका सन्नाटा छा जाए। आपके रब ने न आपको छोड़ा और न बेज़ार

(अप्रसन्न) हुआ। और निश्चय ही तत्पश्चात् आनेवाली (अवधि) तुम्हारे लिए पहलेवाली से उत्तम है।" (93:1-4)

इन आयतों में दिन के प्रकाश और रात्रि के अंधकार को इस बात का प्रमाण ठहराया है कि पैग़म्बर (सल्ल०) से जिनके द्वारा ईश्वर की किताब हम तक पहुँची है– उनका प्रभु अपना नाता तोड़ नहीं सकता। इस शुभ सूचना के द्वारा समस्त ईमानवालों को सांत्वना दे दी गई कि जिससे प्रत्येक दशा में अपने प्रभु से आशा का नाता जोड़े रख सकें। मनुष्य अपने कारोबार में व्यस्त होता है। आजीविका की खोज में दौड़-भाग करता है, रात उसके लिए विश्राम और शान्ति का अवसर जुटाती है। मनुष्य की यह एक बड़ी ज़रूरत है कि उसकी दुनिया में दिन और रात दोनों आएँ। क्या हमारा रब, जिसने हमारे हित को देखते हुए रात-दिन के आने-जाने का सिलसिला जारी किया है, किसी दशा में हमें भूल सकता है। जब वह सामान्य मनुष्यों की ज़रूरतों का इतना ख़याल रखता है तो वह अपने विशिष्ट और प्रिय रसूल को असहाय कैसे छोड़ सकता है।

तत्पश्चात् यह सूचना दी गई है कि आपके भविष्य की दशा पहले से अच्छी होगी। इसका प्रमाणीकरण भी रात-दिन के आने-जाने से किया गया। ईश्वर का कोई कार्य भी तत्त्वदर्शिता, दयालुता और मनुष्य के कल्याण के विरुद्ध नहीं हो सकता। इसपर मानव-संसार के रात्रि और दिवस साक्षी हैं। रात-दिन के आने-जाने से, जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, हमारी बहुत सारी ज़रूरतें जुड़ी हुई हैं। यदि ईश्वर अपने विशिष्ट बन्दों को सांसारिक कठिनाइयों और कर्मक्षेत्र की रुकावटों में ग्रस्त करता है तो इसमें भी, निश्चय ही, ईश्वर के समक्ष उन्हीं बन्दों की कोई भलाई और सफलता होगी। ये आपदाएँ और कठिनाइयाँ ईश्वर के आज्ञाकारी बन्दों के लिए आराम और सुख की भूमिका हैं– इतिहास से यह भविष्यवाणी अक्षरशः सिद्ध होती है। अतएव हम देखते हैं कि नबी (सल्ल०) और आपके साथी जो ईश्वर के मार्ग में कठिन मुसीबत

उठा रहे थे, अन्ततः सफलता उन्हीं के हिस्से में आती है। आख़िरत के वास्तविक जीवन में तो यह सत्य और अधिक स्पष्ट होकर रहेगा।

क़ुरआन में एक स्थान पर है–

> "साक्षी है तारा जब वह नीचे को आए। तुम्हारा साथी (मुहम्मद सल्ल॰) न पथभ्रष्ट हुआ और न बहका, और न वह अपनी इच्छा से बोलता है। वह तो बस एक प्रकाशना है जो की जा रही है।" (53:1-4)

इन आयतों में इस सच्चाई को साबित किया गया है कि ईश्वर के भेजे हुए रसूल ने न कभी ग़लत रास्ता अपनाया और न उन्होंने लोगों का ग़लत मार्गदर्शन किया। आपने जो संदेश भी लोगों तक पहुँचाया वह ईश्वर की ओर से था, जिसे प्रकाशना के द्वारा ईश्वर ने आप तक भेजा था। इसके साक्ष्य में उस तारे को पेश किया गया है जो डूबने के निकट हो। डूबनेवाले सितारे के सूक्ष्म संकेतों को समझनेवाला कभी क़ुरआन के दावे को झुठला नहीं सकता। विचार कीजिए, सितारे ने अपनी यात्रा पूरी कर ली जबकि वह डूबने के निकट है, किन्तु मार्ग में उसने न कहीं टेढ़ी चाल अपनाई और न कन्हीं उसने अपने मार्ग को त्यागा। उसने अपनी पूरी यात्रा अपने निर्धारित मार्ग से पूरी की। आकाश के नक्षत्र के इस यात्रा का वह महत्व नहीं है जो महत्व उस दायित्व के निर्वाह का है, जिस दायित्व के पद पर रसूल ईश्वर की ओर से नियुक्त होता है। जब एक सितारा अपने मार्ग से नहीं हटता तो उस रसूल से कैसे यह आशा की जा सकती है कि वह अपने रास्ते से हट जाएगा, जो ईश्वर का प्रतिनिधि होता है, जिसको ईश्वर अपनी ओर से मार्गदर्शन के महत्वपूर्ण कार्य पर नियुक्त करता है। अतः निश्चय ही उसका जीवन पथभ्रष्टता से मुक्त होता है, वह कभी भी मानवों की ग़लत रहनुमाई नहीं कर सकता। यदि वह कहता है कि ईश्वर प्रकाशना द्वारा उससे बात करता है तो वह यह सत्य कहता है। हम ग़लत बात उससे जोड़ नहीं सकते।

प्रकाशना सन्देश भेजने के उस गुप्त सिलसिले को कहते हैं जो ईश्वर और उसके सृष्ट-जीव के मध्य जारी है, जिसके द्वारा प्रत्येक जीव अपने उस काम में मार्गदर्शन प्राप्त करता है जिसके लिए उसे पैदा किया गया है। मनुष्य के अतिरिक्त दूसरे सृष्ट-जीव के सभी काम अचेतन रूप से प्राकृतिक मनोवृति के अंतर्गत संपन्न होते हैं। उनसे सम्बन्धित प्रकाशना, उनकी सहज-वृत्ति (Instinct) के परदे में काम करती है। सामान्य पशु केवल सादा-सी चेतना (Simple Consciousness) के स्तर पर होते हैं। चेतना के इस पाशविक स्तर पर जानकारी का माध्यम केवल इन्द्रीय जन्य अनुभव-शक्तियाँ (Senses) होती हैं। यहाँ केवल सहज-वृत्ति काम करती है, इसलिए पाशविक चेतना में केवल इन्द्रीय जन्य ज्ञान (Perceptual Knowlege) प्राप्त होता है।

पाशविक स्तर के आगे आत्म-चेतना (Self-Consciousness) का दर्जा है। यहाँ प्रज्ञा (Intellect) काम करती है। यह सामान्य मानवीय चेतना का स्तर है। मानवीय चेतना ऐन्द्रिक चेतना से गुज़रकर वैचारिक ज्ञान (Conceptual Konwledge) की क्षमता भी रखती है। ऑस्पेंसकी (Ouspensky) की दृष्टि में यह क्षमता पाशविक चेतना के विकास से प्राप्त नहीं हो सकती। मनुष्य जानता है कि वह जानता है। समान्य पशु और जीव-जन्तु केवल जानते हैं। उन्हें अपने जानने का ज्ञान नहीं होता। आत्म-चेतना के स्थान पर केवल मनुष्य होता है। वह चेतना के द्वारा कल्पनाएँ कर लेता है और उन कल्पनाओं से उसकी बुद्धि निष्कर्ष निकाल लेती है। चेतना के इस स्तर पर मनुष्य को निर्णय करने की क्षमता प्राप्त होती है। वह जिस कार्य को कर सकता है, उसे अपने इरादे से छोड़ भी सकता है और वह जिस कार्य को नहीं करता, उसे अपने फैसले और इरादे से कर भी सकता है।

पशु अचेतन रूप से प्राकृतिक रुचि के अंतर्गत अपने सारे काम करते हैं। उनकी हैसियत मात्र जीवित यंत्र की है, जिन्हें मानवीय आवश्यकताओं के अंतर्गत पैदा किया गया है। उनकी एक लगी-बँधी

राह है जिसके विपरीत वे चल नहीं सकते। इससे हटकर मनुष्य को संकल्प और अधिकार की शक्ति दी गई है। किसी कार्य के करने के लिए उसे फैसला करना होता है। वह इसके लिए अपने इरादे से काम लेता है। इरादा और अधिकार की स्वतंत्रता के कारण उसका जीवन अत्यंत जटिल हो गया है। उसका जीवन विभिन्न प्रकार की समस्याओं का संग्रह है। उसे पग-पग पर मार्गदर्शन की आवश्यकता होती है, इसी लिए उसे एक ऐसी प्रकाशना की आवश्यकता है जो उसके पास स्पष्ट रूप से आदेश और विधि-विधान (Law and Order) के रूप में पहुँचे, जिससे वह अपने जीवन को ग़लत राह पर चलने से बचा सके। स्पष्ट आदेश और विधि-विधान मनुष्य किसी महसूस माध्यम से ही प्राप्त कर सकता है। ईश्वर और उसके सामान्य बन्दों के मध्य रसूल एक माध्यम होता है। रसूल मनुष्यों को महसूस और स्पष्ट तरीक़े से ईश्वरीय आदेश से अवगत कराता है। स्वयं उसका अपना व्यावहारिक जीवन ईश्वरीय आदेश का प्रतिरूप होता है।

रिसालत (पैग़म्बरी) का स्थान वास्तव में सामान्य मानव-स्तर से बहुत उच्च होता है। हम उसे विराट् चेतना (Cosmic Consciousness) से अभिव्यंजित कर सकते है। चेतना के इस स्तर पर जगत् की वास्तविकता खुलकर सामने आ जाती है। इस स्थान पर अनुभव में एक ऐसी आभा पैदा हो जाती है जिसे शब्दों में व्यक्त नहीं किया जा सकता। चेतना के इस स्तर पर सत्य मनुष्य से गुप्तवार्ता करता दिखाई देता है। बन्दे के दिल पर वह अपनी वाणी अवतरित करता है, जिसे वह स्पष्ट रूप से सुन लेता है। इस प्रकार वह व्यक्ति प्रत्यक्ष रूप से ईश्वर से उसकी इच्छा मालूम करके दूसरे लोगों को ईश्वरीय आदेश से अवगत कराता है। इससे अधिक प्रकाशना की वास्तविकता को समझना हमारे लिए संभव नहीं है, इससे अधिक का सम्बन्ध अनुभव से है जो केवल एक रसूल ही को प्राप्त होता है।

रसूल को झुठलाने और उसके इनकार करने का कारण यदि हमारे मन में पैदा होनेवाला यह प्रश्न है कि रसूलों को सन्देश भेजने का माध्यम क्यों बनाया गया? जो ईश्वर रसूलों के द्वारा हमें अपनी इच्छा से अवगत करा सकता है, वह सीधे प्रत्येक व्यक्ति का मार्गदर्शन क्यों नहीं करता? ये प्रश्न वास्तव में मनुष्य के दृष्टिकोण की सन्कोचिता की उपज हैं। वर्तमान जगत्-व्यवस्था और मार्गदर्शन के इस विधि में कि ईश्वर प्रत्यक्ष रूप में हर व्यक्ति को सम्बोधित करे, कोई जोड़ नहीं है। जगत् के हर गोशे में पूर्ण रूप से पर्दादारी की शान पाई जाती है। जगत् की प्रत्येक वस्तु प्रत्येक क्षण अपने अस्तित्व एवं स्थायित्व और विकास के लिए ईश्वरीय अनुग्रह पर निर्भर करती है। किन्तु इसके बावजूद मध्य में कार्य-कारण के इतने परदे डाले गए हैं कि सत्यता का प्रत्यक्ष निरीक्षण किसी के लिए संभव नहीं है। परदादारी जगत् का सामान्य नियम है। यहाँ सत्यता सामान्य दृष्टि के समक्ष प्रकट नहीं होती। परदादारी के इस क़ानून से मनुष्य को अलग कर देने का अर्थ यह है कि जगत् में इस कानून की क्रियाशीलता निरर्थक हो जाए। इससे उस उद्देश्य को क्षति पहुँचती है जिसके लिए जगत् में परदादारी का अत्यधिक प्रबंध किया गया है। इसलिए प्रकाशना और रिसालत की धारणा अनिवार्यतः एक ऐसी धारणा है जो वर्तमान जगत्-व्यवस्था के ठीक अनुकूल है। रिसालत ही एक ऐसा माध्यम है जिससे मनुष्य को जीवन के लिए खुले और स्पष्ट आदेश भी मिल सकते हैं और साथ ही परदादारी की शान भी शेष रह सकती है।

जगत्-स्रष्टा ने मार्गदर्शन के समस्त साधन जुटाकर सत्यता को मनुष्य की निगाहों से छिपा रखा है, ताकि इस बात की परीक्षा ली जा सके कि कौन अपनी गवेषणा से ईश्वर तक, जो सम्पूर्ण सृष्टि का अभिप्राय है, पहुँचता और कौन अपनी इच्छा और अपने संकल्प और अधिकार से स्वयं को उसकी बन्दगी और आज्ञापालन में देने को तैयार

होता है। गुप्तता और परदादारी से अभीष्ट मनुष्य की अन्तरात्मा, उसके अंतःकरण और उसके संकल्प और अधिकार की यही परीक्षा है।

ईश्वरीय प्रकाशना के बिना मनुष्य सत्य का ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकता, जिस प्रकार आँख में देखने की क्षमता पाई जाती है किन्तु रात के गहरे अंधेरे में देखने का उससे काम नहीं लिया जा सकता। आँख से देखने का काम हम केवल उस समय ले सकते हैं जबकि दिन का प्रकाश या टार्च मौजूद हो। ठीक इसी प्रकार मनुष्य को सूझ-बूझ और बुद्धि अवश्य दी गई है, किन्तु उसके मार्गदर्शन के लिए वह अकेले बिल्कुल असमर्थ है, इसके लिए वह प्रकाशना पर निर्भर करती है।

यह विचार कि जगत् में कोई चीज़ रहस्य नहीं है, ग़लत है। यदि ऐसा होता तो मनुष्यों के मध्य जगत् की व्याख्या और उसके अर्थ-निर्धारण में सिरे से कोई मतभेद ही पैदा न होता। विज्ञान केवल घटनाओं का वर्णन (Description) है, उनकी व्याख्या और उनके अर्थ-निर्धारण (Interpretation) में वह बिलकुल असमर्थ है। अर्थवत्ता और मूल्यों का अध्ययन उसके कार्यक्षेत्र से बाहर है। इसलिए सत्यता की आत्यांतिक अर्थ जानने के लिए धर्म और दर्शन हमारे लिए अपरिहार्य हो जाता है।

क़ुरआन में एक स्थान पर आया है—

> "बड़ा बरकतवाला है वह जिसके हाथ में सारी बादशाही है और वह हर चीज़ की सामार्थ्य रखता है— जिसने पैदा किया मृत्यु और जीवन को ताकि तुम्हारी परीक्षा करे कि तुममें कर्म की दृष्टि से सबसे अच्छा कौन है। वह प्रभुत्वशाली और क्षमाक्षील है— जिसने ऊपर-तले सात आकाश बनाए। तुम रहमान की संरचना में कोई असंगति और विषमता न देखोगे। फिर निगाह ड़ालो, क्या तुम्हें कोई बिगाड़ दिखाई देता है। फिर दोबारा निगाह डालो, निगाह रद्द होकर और थक-हारकर तुम्हारी और पलट आएगी।" (67:1-4)

मानव-जीवन केवल परीक्षा की अवधि है, यही बात उपर्युक्त आयतों में कही गई है। मनुष्य का अस्तित्व वास्तव में एक नैतिक अस्तित्व है। उसके जीवन से अभीष्ट कोई नैतिक अपेक्षा ही हो सकती है। मनुष्य के पास केवल सुकर्म ही एक ऐसी मूल्यवान निधि है जिसे वह अपने स्रष्टा के समक्ष प्रस्तुत कर सकता है। मनुष्य की परीक्षा यदि हो सकती है तो केवल इसी बात की कि कर्म की दृष्टि से लोगों में अधिक अच्छा कौन है।

यदि मान लिया जाए कि मानव-जीवन का कोई आशय और अर्थ नहीं है। मनुष्य जिस प्रकार चाहे अपना जीवन व्यतीत करे, तो यह मानव अस्तित्व में एक ऐसा दोष होगा जो मनुष्य की दूसरी ख़ूबियों से दूर नहीं हो सकता। जगत् की प्रत्येक वस्तु ईश्वर के शक्ति-सामर्थ्य और तत्वदर्शिता का महान चमत्कार है। ईश्वर की संरचना में, जिसे हम संसार में खुली आंखों से देखते हैं, कोई दोष दिखाई नहीं देता। इसलिए निश्चय ही वह ईश्वर की महान रचना भी दोषों से मुक्त है जिसका नाम मनुष्य है।

मानव-शरीर के विभन्न अंग अत्यन्त सामंजस्य और अनुकूलता के साथ परस्पर जुड़े हुए हैं। प्रत्येक अंग का अपना एक निश्चित काम है। आँख यदि देखने के लिए है तो कान सुनने के लिए है। जिस अंग का जो काम है हम उससे वही काम ले सकते हैं। उससे कोई दूसरा काम नहीं लिया जा सकता। यह मानव-जीवन का एक पक्ष है। दूसरी ओर हम देखते हैं कि मनुष्य किसी विशेष तरीक़े का पाबंद नहीं है। जीवन की जो शैली उसे पसन्द आए उसे वह अपना सकता है, चाहे वह ग़लत हो या सही। मनुष्य विभिन्न दिशाओं में यात्रा कर सकता है। उसके जीवन का कोई ऐसा निश्चित मार्ग नहीं है जिसपर चलने के लिए वह बाध्य हो। देखने में मनुष्य की स्वतंत्रता का उसके शारीरिक व्यवस्था से कोई जोड़ नहीं है। जब उसके प्रत्येक आंगों का एक निश्चित और निर्धारित काम है तो फिर चाहिए तो यह था कि उसके पूरे जीवन

का यही क़ानून होता। उसके जीवन का मार्ग भी ज्ञात और निश्चित होता, जिसपर चलने के लिए वह जन्म से ही विवश होता। किन्तु संसार में मनुष्य जिस स्थिति से दोचार है, वह और है। एक ओर वह इतना अधिक बाध्य और विवश है कि कण भर भी निश्चित नियम की अवहेलना नहीं कर सकता। दूसरी ओर वह बिलकुल स्वतंत्र है कि वह अपनी शक्ति और सामर्थ्य को जिस तरह चाहे उपयोग करे। जीवन का पहलू जो सबसे अधिक महत्वपूर्ण और नाज़ुक था उसी में मनुष्य पर किसी प्रकार की बाध्यता नहीं रखी गई, जिसके कारण मानव के जीवन में एक रूपता और एकात्मता का पैदा होना कठिन हो गया है।

मानव-जीवन में विवशता और स्वतंत्रता दोनों चीज पाई जाती है। विज्ञान जीवन में पाए जानेवाले इस विरोधाभास का कारण बताने में असमर्थ है। इसलिए कि इस विरोधाभास का कोई भौतिक कारण नहीं हो सकता। इस विरोधाभास में अनिवार्यतः कोई उद्देश्य काम कर रहा है, जो विज्ञान की परिधि से बाहर की चीज़ है।

क़ुरआन की दृष्टि में इस संकल्प और कर्म की स्वतंत्रता का उद्देश्य मनुष्यों की परीक्षा है। मानव-जीवन से अभीष्ट वास्तव में ऐसी बन्दगी है जिसे मनुष्य स्वेच्छापूर्वक अपनाए। जिसके अपनाने में उसपर किसी का दबाव न हो। ऐसी बन्दगी के लिए संकल्प और कर्म की स्वतंत्रता अनिवार्य थी। संकल्प और कर्म की इसी स्वतंत्रता ने मनुष्य के परीक्षा के स्थान पर खड़ा कर दिया है।

इस परीक्षा में सफलता प्राप्त करने के लिए मार्गदर्शन के समस्त साधन विद्यमान हैं। ईश-प्रकाशना इस सम्बन्ध में हमारी सहायता करती है। स्वयं जगत् के स्पष्ट संकेत भी इसी की ओर हमारा मार्गदर्शन करते हैं। अब मनुष्य का अपना कर्तव्य है कि वह ईश-प्रकाशना के प्रकाश और जगत् के मार्गदर्शनों से लाभ उठाते हुए सत्य और असत्य का विवेक पैदा करे और अपने लिए जीवन की वह शैली अपनाए जो परीक्षा में सफल होने का ज़मानतदार है।

संसार मनुष्य के लिए परीक्षा-स्थल है। जीवन का अवसर वास्तव में वह निश्चित समय है जिसमें हमें अपने परीक्षा के पर्चे करने हैं। मानव-जीवन को इसके अतिरिक्त जो हैसियत भी दी जाएगी, वह जगत् और मानव का अपना अस्तित्व दोनों ही उसका निषेध करेंगे। जगत् से केवल इसी एक बात का साक्ष्य मिलता है कि मनुष्य का वर्तमान जीवन परीक्षा की एक अवधि है। ईश्वर का आज्ञापालन और बन्दगी ही हमारे जीवन का एक मात्र उद्देश्य है और इसी में हमारी सफलता और असफलता का रहस्य निहित है। इस सम्बन्ध में क़ुरआन की निम्नलिखित आयतें विचारणीय है--

> "आकाश को हमने (ईश्वर के) अपने हाथ के बल से बनाया और हम बड़ी समाई रखनेवाले हैं। और धरती को हमने बिछाया, तो हम कैसा अच्छा बिछानेवाले हैं! और हमने हर चीज़ के जोड़े बनाए ताकि तुम ध्यान दो। अतः अल्लाह की ओर दौड़ो; मैं (पैग़म्बर) उसकी ओर से तुम्हारे लिए एक प्रत्यक्ष सावधानकर्ता हूँ।" (51:47-50)

इन आयतों में ईश्वर ने अपनी शक्ति और दयालुता की स्पष्ट निशानियों का उल्लेख किया है। फिर प्रमाण के साथ इसपर प्रकाश डाला है कि मनुष्य के लिए उचित केवल यही हो सकता है कि वह सर्वथा चाहत बनकर ईश्वर की ओर दौड़ पड़े। सही विचार और सही दृष्टि के साथ वास्तव में इसी प्रेम-विह्वलता के भाव का नाम ईमान है। अतएव, उपर्युक्त आयतों में कहा गया—

> "हमने हर चीज़ के जोड़े बनाए ताकि तुम ध्यान दो। अतः अल्लाह की ओर दौड़ो।"

हर चीज़ को जोड़े के साथ पैदा करने से न केवल यह कि हमारी बाह्य आवश्यकताएँ पूरी होती हैं, बल्कि इसमें हमारे आध्यात्मिक और अर्थमयता सम्बन्धी मार्गदर्शन के स्पष्ट इशारे भी पाए जाते हैं।

हर जोड़े में पारस्परिक सम्बन्ध पाया जाता है, जो इस बात को व्यक्त करता है कि दोनों एक ही इरादे के अन्तर्गत पैदा किए गए हैं। दोनों को पैदा करनेवाला और उनका पालन-पोषण करनेवाला एक है। केवल उसी का उनपर अधिकार प्राप्त है। इसलिए वही अकेला उन दोनों का शासक और अभीष्ट हो सकता है। बन्दगी केवल उसी एक की करनी चाहिए। जीवन में उसी के आदेशों और उसी के दिए हुए क़ानून का अनुसरण करना चाहिए। हमारे जीवन का कोई पक्ष भी उसकी बन्दगी से अलग न हो।

सम्बन्ध और सम्पर्क की यह परिधि इतनी व्यापक हो जाती है कि जगत् की कोई एक चीज़ अलग दिखाई नहीं देती। जगत् की समस्त चीज़ों में परस्पर एकता और अनुकूलता का क़ानून क्रियान्वित दिखाई देता है। सम्पूर्ण जगत् एक दिखाई देता है। यह इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि न केवल किसी जोड़े का, बल्कि इस पूरे जगत् का एक ही स्रष्टा और अधीश है।

हर चीज़ को जोड़ा-जोड़ा पैदा करने में मनुष्य के लिए जो मार्गदर्शन पाया जाता है वह यह है कि इस प्रकार उसे इस तथ्य से चेतना के स्तर पर यह ज्ञान प्राप्त हो जाए कि जिस प्रकार हर चीज़ अपने जोड़े के बिना अपूर्ण है, स्वयं मनुष्य का अपना बाह्य अस्तित्व अपूर्ण रह जाता है, ठीक इसी तरह उसका आत्मिक और आध्यात्मिक अस्तित्व भी किसी ऐसे जोड़े की अपेक्षा करता है कि जिसके साथ मिलकर उसका आत्मिक अस्तित्व पूर्ण हो सके।

पति-पत्नी, पिता-पुत्र, भाई-बहन इत्यादि मनुष्य के जो नाते-रिश्ते हैं उनसे केवल ज़ाहिरी नातेदारी ही वुजूद में नहीं आती है, बल्कि ये नाते-रिश्ते इनसान को परस्पर गहरे एहसास के साथ जोड़ते हैं। किन्तु यह एक सच्चाई है कि इसके बावजूद मनुष्य का जीवन अपूर्ण ही रहता है। मानव-जीवन में इसके बावजूद एक ऐसी रिक्तता शेष रहती है जो भरती नहीं।

मानव-आत्मा एकत्व के किसी ऐसे केन्द्र की अभिलाषी है जिसकी ओर मनुष्य अपने पूर्ण जीवन के साथ बढ़ सके। मानव-आत्मा भौतिकता से एक ऐसी सत्ता की कामना करती है जिसके आगे वह अपनी समस्त भावनाओं और भक्ति-भाव इत्यादि को न्योछावर कर सके।

अर्थमयता की दृष्टि से मनुष्य सर्वथा चाहत और प्यास का नाम है। केवल ईश्वर ही मनुष्य की स्वाभाविक अपेक्षाओं का उत्तर हो सकता है। वही अकेला मनुष्य की ज़रूरतों को पूरी करता और उसकी कठिनाइयों को दूर करता है। मन के एकान्त गृह से लेकर जीवन के समस्त कामों और उसके कोलाहलों तक में कहीं भी उसका सम्बन्ध हमसे विच्छेद नहीं होता। वही हमारा सखा भी है और उसी से मिलकर मनुष्य का आध्यात्मिक जीवन पूर्ण होता है। इसी लिए कहा गया— अल्लाह की ओर दौड़ पड़ो। वही अकेला तुम्हारी अपेक्षाओं का उत्तर है। उसी को तुम अपनी चाहत और प्रयास का केन्द्र बनाओ। केवल वही तुम्हारा अभीष्ट और पूज्य है। वही तुम्हारा रक्षक और अन्तिम आश्रय है। यदि तुमने ऐसा न किया, यदि तुमने उसका दामन छोड़ दिया, यदि तुमने दूसरों को अपना प्रेम-पात्र और कार्य-साधक बना लिया तो लोक-परलोक में तुम्हारा सम्बन्ध वास्तविक कार्य-साधक और आवश्यकता की आपूर्ति करनेवाले से कटकर रह जाएगा और तुम तबाह हो जाओगे।

अल्लाह ने मनुष्य को अपनी बन्दगी के लिए चुनकर उसे प्रतिष्ठा का स्थान प्रदान किया है। मानव-प्रकृति सर्वथा विनय और भक्ति है। मनुष्य अपनी प्रकृति का विरोध करके विनाश के अतिरिक्त और कुछ प्राप्त नहीं कर सकता। ईश्वर मनुष्य से रोज़ी और आजीविका का इच्छुक नहीं हैं, रोज़ी पहुँचाना तो स्वयं उसका अपना काम है। वह मनुष्यों से केवल भक्ति एवं श्रद्धापूर्ण बन्दगी की अपेक्षा करता है।

मनुष्य के उर्ध्वोगमन की दिशा नक्षत्रों की ओर नहीं, उसी ईश्वर की ओर है जो अंतिम सच्चाई (Ultimate Reality) और जगत् की मूलात्मा है। जगत् के उद्‌घाटन का आशय केवल एक स्थानातीत ईश्वर है, जो पूर्ण,

व्याप्त और प्रत्येक तथ्य का स्रोत है। वही हमारे आत्म का भी स्रोत है। वही हमारे चरित्र और आचरण का अभीष्ट और अन्तिम लक्ष्य है। और यही तथ्य भी है कि हमारे लिए वास्तविक, स्थायी और व्यापक (Real, Permanent and Absolute) नैतिक आदर्श व्यापक सत्ता ही में हो सकता है। सूक्ष्म एवं कोमल भावनाओं और अर्थमयता से सम्बन्धित चेतनाओं से आभूषित मानव-आत्मा एक जीवंत और शक्तिमान ईश्वर की अपेक्षा करती है, जो उसकी चाहतों और प्रयासों और उसके प्रेम का उत्तर बन सके। मनुष्य मात्र भौतिकता के सहारे मानव-जीवन के कुछ थोड़े दिन भी व्यतीत करने की सामर्थ्य नहीं रखता। मनुष्य केवल पेट ही नहीं रखता, उसे ईश्वर ने मन और मस्तिष्क भी प्रदान किए हैं। मानव-जीवन में भावना और चेतना ही कार्यशील हैं, मनुष्य को सबसे प्रिय उसकी अपनी भावनाएँ और कोमल चेतनाएँ ही होती हैं। ईश्वर पर भरोसा और बन्दगी और भक्ति का यह भाव स्वयं अपने अन्तर के उच्चतम तत्त्व के साथ वफ़ादारी का एहसास है। इससे इनकार वही कर सकता है जो स्वयं अपने अन्तर की गहराई से अनभिज्ञ हो।

ऊपर क़ुरआन के प्रकाश में जो कुछ कहा गया है वह यह अनुमान करने के लिए पर्याप्त है कि क़ुरआन ने जिन सच्चाइयों की ओर मानवों को आमंत्रित किया है, वही जीवन की बहुमूल्य सच्चाइयाँ हैं और सम्पूर्ण जीवन उन्हीं सच्चाइयों का जीवंत चित्र है। मनुष्य कहाँ तक उन सच्चाइयों और तथ्यों और अपने जीवन के मध्य एकात्मता पैदा करने का प्रयास करता है, यह उसके अपने एहसास पर निर्भर करता है, और इसी एहसास और प्रयास पर लोक और परलोक में मानव के कल्याण और सफलता की प्राप्ति निर्भर करती है। सौभाग्यशाली हैं वे लोग जो अपने जीवन की जगत् के उन तथ्यों के साथ अनुकूलता बनाए रखें और असफल और अकृतार्थ हैं वे लोग जो इन सच्चाइयों की ओर से अपने नेत्र बन्द रखें।

❖❖❖